प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

प्रथम अपील क्रमांक: 201/2004

अपीलार्थीगण दयाशंकर और अन्य

विरुद्ध

प्रत्यर्थीगण जयशंकर (मृत) अपने विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से एवं अन्य

निर्णय

निर्णय की घोषणा के लिए सूचीबद्ध करें। दिनांक- 22/11/2011

सही/-

एन. के. अग्रवाल

न्यायाधीश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

प्रथम अपील क्रमांक: 201/2004

अपीलार्थीगण दयाशंकर और अन्य

विरुद्ध

प्रत्यर्थीगण जयशंकर (मृत) अपने विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से एवं अन्य

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 96 के अंतर्गत प्रथम अपील

एकलपीठ: माननीय श्री एन. के. अग्रवाल, न्यायमूर्ति

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

उपस्थित:- अपीलार्थीगण की ओर से – श्री आर.एन. पुस्ती अधिवक्ता।

मृतक/प्रत्यर्थी क्रमांक 1 के विधिक प्रतिनिधियों (i) से (vi) की ओर से – श्री एच.एस. पटेल, अधिवक्ता।

राज्य/प्रत्यर्थी क्रमांक 2 की ओर से – श्री जी.डी. वासवानी, शासकीय अधिवक्ता।

प्रत्यर्थी क्रमांक 7 की ओर से – श्री अभिजीत सरकार, अधिवक्ता।

अन्य प्रत्यर्थीगण के लिए कोई उपस्थित नहीं।

निर्णय

(दिनांक 22-11-2011 को उद्घोषित)

1. यह प्रतिवादीगण की प्रथम अपील, सिविल प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में सी.पी.सी.) की धारा 96 के अंतर्गत, व्यवहार वाद क्रमांक 18-अ/2002 में चतुर्थ अतिरिक्त जिला न्यायाधीश

(फास्ट ट्रैक कोर्ट), रायगढ़ द्वारा दिनांक 21.09.2004 को पारित निर्णय एवं आज्ञप्ति (डिक्री) के विरुद्ध प्रस्तुत है, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन वादी का वाद स्वीकार कर आज्ञप्ति पारित की गयी है।

2. अपील की लंबितता के दौरान, अपीलार्थी क्रमांक 2 चंद्र शेखर और प्रत्यर्थी क्रमांक 1/वादी का निधन हो गया और उनके विधिक प्रतिनिधियों को अभिलेख में जोड़ा गया।

3. निर्विवाद प्रकरण के तथ्यों का संक्षेप में विवरण इस प्रकार है:-

(i) मूल वादी (जो अब मृत है) ने, वाद संपत्ति अर्थात अनुसूची- ए में वर्णित रायगढ़ में स्थित मकान तथा अनुसूची- बी में वर्णित ग्राम सहसपुर, तहसील सारंगढ़ में स्थित कृषि भूमि, कुल रकबा 2,631 हेक्टेयर पर स्वत्व की घोषणा करने के लिए, अनुसूची- ए में वर्णित संपत्ति मकान का कब्जा पुनः प्राप्त करने के लिए और अनुसूची- बी में वर्णित कृषि भूमि पर अपने कब्जे में हस्तक्षेप से प्रतिवादीगण को प्रतिबंधित करने हेतु स्थायी निषेधाज्ञा के लिए एक व्यवहार वाद, अन्य आधारों के अतिरिक्त इस आधार पर दायर किया कि वाद संपत्ति समारू राम अर्थात् उनके पिता, जिन्होंने पंजीकृत वसीयतनामा (प्रदर्श पी.1) के माध्यम से वाद संपत्ति को वादी के पक्ष में दिनांक 06.03.1986 को वसीयत किया था, की स्व-अर्जित संपत्ति थी। समारू राम का निधन 23.01.1994 को सारंगढ़ में हुआ था। तत्पश्चात, उपरोक्त वसीयत के आधार पर, वादी वाद संपत्ति का पूर्ण स्वामी बन गया और साथ ही राजस्व अभिलेखों में उसका नाम भी नामांतरित कर दिया गया।

(ii) वादी के अनुसार, मूल प्रतिवादीगण दयाशंकर और चंद्रशेखर, स्वर्गीय समारू राम की उनकी दूसरी पत्नी से उत्पन्न संतान हैं। वादी एवं उनके पिता स्वर्गीय समारू राम, सारंगढ़ अस्पताल के सामने स्थित मकान में निवास करते थे, जबकि अपीलार्थीगण अपनी माता के साथ बीरपारा, सारंगढ़ में स्थित मकान में निवास

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

करते थे। मूल प्रतिवादीगण (आगे "प्रतिवादीगण" कहा गया है) ने वादी से बलपूर्वक एक खाली स्टाम्प पेपर पर हस्ताक्षर करवा लिए तथा वादी के साथ-साथ राजस्व अभिलेखों में अपने नाम नामांतरित करवा लिए और वादी के स्वामित्व अधिकार (स्वत्वाधिकार) को विवादित करने लगे। वादी के अनुसार, दिनांक 06.03.1986 के वास्तविक एवं वैध पंजीकृत वसीयतनामा के आधार पर वह वाद संपत्ति का पूर्ण स्वामी बना है।

(iii) संक्षेप में, वाद में प्रतिरक्षा पक्ष का अन्य के अतिरिक्त यह कथन है कि वाद संपत्ति स्वर्गीय समारू राम की स्व-अर्जित संपत्ति नहीं थी, बल्कि स्वर्गीय समारू राम एवं प्रतिवादीगण की संयुक्त आय से क्रय की गई थी तथा यह उनकी संयुक्त पारिवारिक संपत्ति है; स्वर्गीय समारू राम को वादी के पक्ष में वसीयत निष्पादित करने का कोई अधिकार नहीं था; अभिकथित वसीयत कूटरचित एवं बनावटी है तथा उससे वादी को कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है और वाद निरस्त किए जाने योग्य है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(iv) प्रतिवादीगण के अनुसार, स्वर्गीय समारू राम ने अपनी दोनों पत्नियों, अर्थात् ननकी बाई @ सैली बाई एवं नानबाई, के मध्य शांति बनाए रखने के उद्देश्य से अपने जीवनकाल में ही बंटवारा कर दिया था तथा ग्राम सहसपुर में स्थित 5 एकड़ भूमि एवं बीरपारा में स्थित एक मकान मूल प्रतिवादीगण एवं उनकी माता के पक्ष में आवंटित किया था, जबकि 1½ एकड़ भूमि एवं जेलपारा में स्थित मकान वादी की माता ननकी बाई @ सैली के पक्ष में आवंटित किया था और वह उनके साथ पृथक रूप से रहने लगे थे।

(v) माननीय विचारण न्यायालय ने विवाद्यकों के विरचित करने के पश्चात् पक्षकारों के साक्ष्य अभिलेखबद्ध किए।

(vi) माननीय विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय के माध्यम से वादी के पक्ष में वाद डिक्री करते हुए, अन्य बातों के साथ-साथ यह निष्कर्ष निकाला कि वसीयत (प्रदर्श

पी-1) एक वास्तविक एवं वैध दस्तावेज है; स्वर्गीय समारू राम द्वारा अपने जीवनकाल में पक्षकारों के मध्य वाद संपत्ति का कोई विभाजन नहीं किया गया था; वाद संपत्ति स्वर्गीय समारू राम की स्व-अर्जित संपत्ति है तथा यह उनकी पैतृक संपत्ति नहीं है। दिनांक 06.03.1986 की वसीयत के आधार पर वादी वाद संपत्ति का पूर्ण स्वामी बन गया।

4. अपीलार्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री रतन पुस्ती ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि वसीयतनामा वास्तविक दस्तावेज नहीं है, बल्कि वादी द्वारा स्वर्गीय समारू राम की वृद्धावस्था एवं दुर्बलता का अनुचित लाभ उठाकर अपने पक्ष में निष्पादित कराया गया था; यह वसीयतनामा, उस तरीके से जैसा कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (आगे "1872 का अधिनियम" कहा गया है) की धारा 68 तथा भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (आगे "1925 का अधिनियम" कहा गया है) की धारा 63 (ग) के अधीन आवश्यक है, सिद्ध नहीं किया गया है; अनुप्रमाणक/सत्यापनकर्ता साक्षी क्रमांक 2 जितेन्द्र कुमार मिश्रा की भूमिका संदेह के घेरे में है; वसीयत के प्रस्तोता अर्थात् वादी (अ.सा.-1) द्वारा वसीयत के अनुप्रमाणन/सत्यापन के निष्पादन के संबंध में दिया गया कथन, तुंगभद्र सिंह (अ.सा.-2) के कथन से विरोधाभासी है; तुंगभद्र सिंह (अ.सा.-2) की साक्ष्य 1925 के अधिनियम की धारा 63 (ग) की अपेक्षाओं/आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं करती है, क्योंकि अपने साक्ष्य में उन्होंने कहीं भी यह कथन नहीं किया है कि जितेन्द्र कुमार मिश्रा ने कभी वसीयतकर्ता को वसीयतनामा पर हस्ताक्षर करते या अंगूठा निशान लगाते हुए देखा हो, अथवा यह कि जितेन्द्र कुमार मिश्रा ने वसीयतकर्ता की उपस्थिति में वसीयतनामा पर हस्ताक्षर किए हों। केवल दोनों साक्षियों की उपस्थिति मात्र से 1925 के अधिनियम की धारा 63 (ग) के अंतर्गत वसीयत के प्रस्तोता पर डाले गए दायित्व/भार का निर्वहन नहीं होता, जब तक यह सिद्ध न किया जाए कि प्रत्येक साक्षी ने वसीयतकर्ता को वसीयतनामा

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

पर हस्ताक्षर करते हुए देखा हो तथा उसके पश्चात उन्होंने वसीयतकर्ता की उपस्थिति में संयुक्त रूप से अथवा पृथक-पृथक रूप से अपने हस्ताक्षर किए हों। आगे यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया कि द्वितीय अनुप्रमाणक/सत्यापनकर्ता साक्षी जितेन्द्र कुमार मिश्रा ने वादी के मामले का समर्थन नहीं किया है। प्रति-परीक्षा की कंडिका-6 में उन्होंने, उन्हें दी गई सुझाव को स्पष्ट रूप से इंकार किया है और इंकार किया है कि उन्होंने स्वर्गीय समारू राम की उपस्थिति में वसीयतनामा पर हस्ताक्षर किए थे।

5. श्री पुस्ती के अनुसार, वसीयतनामा (प्रदर्श पी-1) भी अवैध है तथा निम्नलिखित अस्पष्टीकृत संदेहास्पद परिस्थितियों से घिरा हुआ है—

(i) वसीयत में आवश्यक तथ्यों का गलत उल्लेख किया गया है।

(ii) प्रतिवादीगण को, जो स्वर्गीय समारू राम के विधिक प्रतिनिधि भी हैं, कुछ भी प्रदान नहीं किया गया है, जो कि स्वाभाविक नहीं है।

(iii) स्वयं वादी ने वसीयत के निष्पादन में प्रमुख भूमिका निभाई है।

(iv) वसीयतकर्ता अत्यधिक वृद्ध एवं दुर्बल अवस्था में थे तथा वादी ऐसी स्थिति में था कि वह उनकी इच्छा पर प्रभुत्व स्थापित कर सकता था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

6. दूसरी ओर, मृतक/प्रत्यर्थी क्रमांक-1 के विधिक प्रतिनिधि क्रमांक (i) से (vi) की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एच.एस. पटेल ने आक्षेपित निर्णय एवं आज्ञप्ति का समर्थन करते हुए यह तर्क प्रस्तुत किया कि विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत संपूर्ण साक्ष्य एवं सामग्री का सम्यक् एवं विधि-सम्मत परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन करने के पश्चात् निर्णय एवं आज्ञप्ति पारित की है, जो यथावत बनाए रखा जाना चाहिए।

7. मैंने पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं को सुना तथा आक्षेपित निर्णय एवं आज्ञप्ति, सहित विचारण न्यायालय के अभिलेख का अवलोकन किया है।

8. निर्विवाद रूप से, वाद संपत्ति स्वर्गीय समारू राम के नाम पर विभिन्न पंजीकृत विक्रय विलेखों के माध्यम से क्रय की गई थी। प्रतिवादी चंद्रशेखर का उस समय जन्म भी नहीं हुआ था (जैसा कि चंद्रशेखर [प्रतिवादी साक्षी-1] के कथन से स्पष्ट है), जबकि प्रतिवादी दयाशंकर अवयस्क था, क्योंकि स्वर्गीय समारू राम द्वारा उक्त संपत्तियाँ वर्ष 1946 से 1957 के मध्य क्रय की गई थीं। यह तथ्य भी सही नहीं है कि स्वर्गीय समारू राम ने बंटवारा किया था तथा प्रतिवादीगण एवं उनकी माता के पक्ष में 5 एकड़ भूमि एवं एक मकान आवंटित किया था। स्वयं चंद्रशेखर (प्रतिवादी साक्षी-1) ने अपने कथन के कंडिका-31 में यह स्वीकार किया है कि वे बीरपारा में स्थित मकान में स्वर्गीय समारू राम की सहमति से तथा उनके निधन के पश्चात् वादी स्वर्गीय जयशंकर की सहमति से निवास कर रहे थे।

9. प्रकरण में वास्तविक विवाद इस प्रश्न के इर्द-गिर्द केंद्रित है कि क्या प्रकरण के तथ्यों एवं परिस्थितियों में वसीयतनामा (प्रदर्श पी-1) का निष्पादन एवं प्रमाणन भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63(ग) तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 के प्रावधानों के अनुसार विधिवत् किया गया है या नहीं, तथा क्या उक्त वसीयतनामा ऐसे संदेहास्पद परिस्थितियों से घिरा हुआ है जो उसे अवैध एवं अवास्तविक बनाती हैं।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

10. भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (संक्षेप में '1925 का अधिनियम') की धारा 63 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (आगे '1872 का अधिनियम') की धारा 68 इस प्रकार हैं—

> **63. विशेषाधिकार रहित विलों का निष्पादन—** प्रत्येक वसीयतकर्ता, जो किसी अभियान में नियोजित या वास्तविक लड़ाई में लगा हुआ सैनिक या इस प्रकार नियोजित या लगा हुआ वायु सैनिक या समुद्र पर कोई जहाजी नहीं है अपनी वसीयत निम्नलिखित नियमों के अनुसार निष्पादित करेगा:—

(क) वसीयतकर्ता विल पर अपने हस्ताक्षर करेगा या अपना चिन्ह लगाएगा, या उस पर किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उसकी उपस्थिति में और उसके निदेशानुसार हस्ताक्षर किया जायेगा।

(ख) वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर या चिन्ह या उसके लिए हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर ऐसे किये जाएंगे कि उससे यह प्रकट हो कि उसके द्वारा लेख को विल के रूप में प्रभावी करने का आशय था।

(ग) विल को दो या दो से अधिक साक्षियों द्वारा अनुप्रमाणित किया जाएगा, जिनमें से प्रत्येक ने वसीयतकर्ता को विल पर हस्ताक्षर करते हुए या चिन्ह लगते हुए देखा है या वसीयतकर्ता की उपस्थिति में और उसके निदेशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को विल पर हस्ताक्षर करते हुए देखा है या वसीयतकर्ता से उसके हस्ताक्षर या चिन्ह की या ऐसे अन्य व्यक्ति के हस्ताक्षर की वैक्तिक अभिस्वीकृति प्राप्त की है; और प्रत्येक साक्षी वसीयतकर्ता की उपस्थिति में विल पर हस्ताक्षर करेगा किन्तु यह आवश्यक नहीं होगा कि एक से अधिक साक्षी एक ही समय पर उपस्थित हों और अनुप्रमाणन का कोई विशेष प्ररूप आवश्यक नहीं होगा।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"**68. ऐसी दस्तावेज के निष्पादन का साबित किया जाना जिसका अनुप्रमाणित होना विधि द्वारा आपेक्षित है—** यदि किसी दस्तावेज का विधि द्वारा अनुप्रमाणित होना विधि द्वारा आपेक्षित है तो उसे साक्ष्य के रूप में उपयोग में न लाया जायेगा, जब तक कि कम से कम एक अनुप्रमाणिक साक्षी, यदि कोई अनुप्रमाणिक साक्षी जीवित और न्यायालय की आदेशिका के अध्यधीन हो, उसका निष्पादन साबित करने के प्रायोजन से न बुलाया गया हो:

परन्तु ऐसी किसी दस्तावेज के निष्पादन को साबित करने के लिए, जो वसीयत नहीं है और जो भारतीय रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का 16) के उपबंधों के अनुसार रजिस्ट्रीकृत है किसी अनुप्रमाणक साक्षी को बुलाना आवश्यक

न होगा, जब तक कि उसके निष्पादन का प्रत्याख्यान उस व्यक्ति द्वारा, जिसके द्वारा,उसका निष्पादन होना तात्पर्पित है विनिर्दिष्टतः न किया गया हो।"

11. 1925 के अधिनियम की धारा 63 विशेषाधिकार रहित वसीयत (विल) के निष्पादन की विधि और तरीके को निर्धारित करती है। 1982 के अधिनियम की धारा 68 उस दस्तावेज़ के निष्पादन, जिसका विधि द्वारा अनुप्रमाणित किया जाना आवश्यक है, उसकी विधि और तरीके तथा दस्तावेज़ के निष्पादन के प्रमाण के बारे में बताती है। यह स्पष्ट शब्दों में यह कहती है कि वसीयत के निष्पादन को कम से कम एक अनुप्रमाणित करने वाले साक्षी द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए, यदि वह अनुप्रमाणित करने वाले साक्षी जीवित है और न्यायालय के आदेश के अधीन है और साक्ष्य देने में सक्षम है। वसीयत एक दस्तावेज़ होने के कारण, इसे प्राथमिक साक्ष्य द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए, सिवाय इसके कि जब न्यायालय दस्तावेज़ को द्वितीयक साक्ष्य द्वारा प्रमाणित करने की अनुमति देता है।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

12. यह सिद्ध करने का भार कि वसीयतनामा 1925 के अधिनियम की धारा 63 के प्रावधानों के अनुसार विधिवत् निष्पादित किया गया है तथा एक वास्तविक (प्रामाणिक) दस्तावेज है, वसीयत के प्रस्तोता पर होता है। यदि वसीयतनामा किसी संदेहास्पद परिस्थिति से घिरा हुआ हो, तो ऐसे संदेह को दूर करने के लिए प्रस्तोता को पर्याप्त, ठोस एवं विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत करना आवश्यक होता है। तथापि, यदि धोखाधड़ी, बलप्रयोग या अनुचित प्रभाव का प्रतिरक्षा के रूप में आरोप लगाया जाता है, तो उसका भार प्रतिवादी/आपत्ति करने वाले पर होता है। उपर्युक्त के अधीन रहते हुए, सामान्यतः वसीयत का प्रमाण अन्य किसी दस्तावेज के प्रमाण से भिन्न नहीं होता।

13. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **ललिताबेन जयंतीलाल पोपट विरुद्ध प्रग्नाबेन जमनादास कटारिया एवं अन्य, 2009 एआईआर एससीडब्ल्यू 828** के प्रकरण में, कंडिका-16 में यह अवधारित किया है कि— 1872 के अधिनियम की धारा 68 उन

व्यक्तियों को एक रियायत (छूट) प्रदान करती है, जो न्यायालय में वसीयत को कम से कम एक अनुप्रमाणक (सत्यापनकर्ता) साक्षी का परीक्षण करके सिद्ध एवं स्थापित करना चाहते हैं, यद्यपि 1925 के अधिनियम की धारा 63(ग) के अंतर्गत वसीयत का कम से कम दो साक्षियों द्वारा अनुप्रमाणन किया जाना अनिवार्य है। किंतु जो बात महत्वपूर्ण है और जिस पर ध्यान दिया जाना चाहिए, वह यह है कि जिस एक अनुप्रमाणक साक्षी का परीक्षण किया गया है, वह वसीयत के निष्पादन को सिद्ध करने की स्थिति में होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, यदि एक अनुप्रमाणक साक्षी 1925 के अधिनियम की धारा 63 के खंड (ग) के अनुसार वसीयतन के निष्पादन को सिद्ध कर देता है, अर्थात् यह सिद्ध कर देता है कि वसीयत का अनुप्रमाणन उसमें कल्पित तरीके से दो अनुप्रमाणक साक्षियों द्वारा किया गया था, तो दूसरे अनुप्रमाणक साक्षी की परीक्षा से छूट दी जा सकती है। जिस एक अनुप्रमाणक साक्षी की परीक्षा की गई है, उसे अपने साक्ष्य में यह संतुष्ट करना होगा कि वसीयत का अनुप्रमाणन उसके द्वारा तथा दूसरे अनुप्रमाणक साक्षी द्वारा विधिवत् किया गया था, जिससे यह सिद्ध हो सके कि वसीयत का विधिपूर्वक निष्पादन हुआ था।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

14. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **भरपूर सिंह एवं अन्य विरुद्ध शमशेर सिंह, 2009 एआईआर एससीडब्ल्यू 1338** के प्रकरण में कंडिका-11 में निम्नानुसार अवधारित किया है—

> "11. वसीयत के प्रमाण के संबंध में विधिक सिद्धांत अब अनिर्णीत विषय नहीं रहे हैं। वसीयत को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63 के खंड (ग) तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए सिद्ध किया जाना आवश्यक है, जिनके शर्तों के अनुसार वसीयत के प्रस्तोता पर यह भार होता है कि वह एक या अधिक अनुप्रमाणक साक्षियों की परीक्षा करके उसके निष्पादन को सिद्ध करे। तथापि, जहाँ वसीयत की वैधता को धोखाधड़ी, बलप्रयोग अथवा अनुचित प्रभाव के आधार पर चुनौती दी जाती है, वहाँ

प्रमाण का भार आपत्ति करने वाले पर होगा। ऐसे प्रकरण में, जहाँ वसीयत संदेहास्पद परिस्थितियों से घिरा हुआ हो, उसे वसीयतकर्ता की अंतिम इच्छापत्रीय अभिव्यक्ति के रूप में स्वीकार नहीं किया जाएगा।"

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **सावित्री एवं अन्य विरुद्ध कार्थ्यायनी अम्मा एवं अन्य, 2007 एआईआर एससीडब्ल्यू 6787** के प्रकरण में अपने निर्णय की कंडिका-15 में निम्नानुसार अवधारित किया है—

"15. तथापि, हम यह भी ध्यान में रखते हैं कि स्वयं अपीलार्थीगण के अनुसार वसीयतकर्ता के वसीयत पर हस्ताक्षर अनुचित प्रभाव अथवा बलप्रयोग के अधीन प्राप्त किए गए थे। इसे सिद्ध करने का भार उन्हीं पर था, जिसे वे सिद्ध करने में असफल रहे हैं। यदि वसीयत के प्रस्तोता यह सिद्ध कर देता है कि वसीयत वसीयतकर्ता द्वारा हस्ताक्षरित किया गया था तथा वह संबंधित समय पर स्वस्थ एवं विवेकपूर्ण मानसिक अवस्था में था और उसे संपत्ति के विन्यास की प्रकृति एवं उसके प्रभाव का ज्ञान था, तो प्रमाण का भार समाप्त हो जाता है। उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए, संलग्न परिस्थितियों से संबंधित पृष्ठभूमिगत तथ्यों पर भी विचार किया जा सकता है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

16. माननीय उच्च न्यायालय पटना की खंडपीठ ने **दुल्हिन फुल कुएरी एवं अन्य विरुद्ध मोती झारो कुएर, एआईआर 1972 पटना 214** के प्रकरण में अपने निर्णय की कंडिका-2 में निम्नानुसार अवधारित किया है—

"दस्तावेज़ के अंत में अथवा उसके किसी अन्य स्थान पर साक्षियों के हस्ताक्षर, बिना किसी अतिरिक्त स्पष्टीकरण के, यह प्रदर्शित करने के लिए पर्याप्त होते हैं कि साक्षियों ने अपने हस्ताक्षर इस आशय से किए थे कि उन्होंने दस्तावेज़ को निष्पादित होते हुए देखा था तथा उन्होंने उसके निष्पादन की स्वीकृति प्राप्त की थी। साक्षियों

के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वे दस्तावेज़ पर यह उल्लेख करें कि उन्होंने अपने हस्ताक्षर वसीयतकर्ता की उपस्थिति में किए थे।"

17. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मधुकर डी. शेंडे विरुद्ध ताराबाई आबा शेडगे, (2002) 2 एससीसी 85** के प्रकरण में यह अवधारित किया है कि साक्ष्य का विधिक-सिद्धांत अनुमान अथवा संदेह को विधिक प्रमाण का स्थान देने की अनुमति नहीं देता और न ही ऐसे अनुमान या संदेह को उस तथ्य को ध्वस्त करने की अनुमति देता है, जो अन्यथा विधिक एवं विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा सिद्ध हो चुका हो। सुदृढ़ आधार वाला संदेह साक्ष्य की गहन समीक्षा का आधार हो सकता है, किंतु केवल संदेह मात्र किसी न्यायिक निर्णय—चाहे वह सकारात्मक हो या नकारात्मक—का आधार नहीं बन सकता और कंडिका 8 एवं 9 में निम्नानुसार अवलोकित किया है—

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"8. वसीयत के प्रमाण की आवश्यकता सामान्यतः अन्य किसी दस्तावेज के प्रमाण के समान ही होती है, केवल इतना अपवाद है कि वसीयत के प्रमाण हेतु प्रस्तुत साक्ष्य को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 63 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 68 की आवश्यकताओं को अतिरिक्त रूप से संतुष्ट करना होता है। यदि न्यायालय अपने समक्ष उपलब्ध सामग्री से उद्भूत तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् यह विश्वास कर ले कि वसीयत वसीयतकर्ता द्वारा विधिवत् निष्पादित किया गया था, अथवा उस तथ्य का अस्तित्व इतना संभावित प्रतीत हो कि उस विशेष प्रकरण की परिस्थितियों में कोई भी विवेकशील व्यक्ति इस धारणा पर कार्य करे कि वसीयत वसीयतकर्ता द्वारा विधिवत् निष्पादित किया गया था, तो वसीयत के निष्पादन का तथ्य सिद्ध माना जाएगा। न्यायिक रूप से प्रशिक्षित मस्तिष्क द्वारा निर्मित प्रमाण की सूक्ष्म संरचना दुर्बल आधार पर टिक नहीं सकती और न ही उसमें अंतर्निहित दोषों के रहते जीवित रह सकती है, परंतु साथ ही उसे संदेह और अनुमान के असंगत प्रहारों द्वारा ध्वस्त किए

जाने की अनुमति भी नहीं दी जानी चाहिए। इस संदर्भ में आर.व्वी. होज (1838), 2 लुइस सीसी 227 में बैरन एल्डरसन द्वारा जूरी को कही गई बात कुछ सीमा तक प्रासंगिक है—

> 'मानव मस्तिष्क परिस्थितियों को आपस में जोड़ने में आनंद अनुभव करता है और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें थोड़ा खींच-तान कर एक समग्र रूप देने का प्रयास करता है; और व्यक्ति का मस्तिष्क जितना अधिक सरल और भोला होता है, उतनी ही अधिक संभावना होती है कि वह स्वयं को भ्रमित कर ले, किसी अनुपस्थित कड़ी को स्वयं जोड़ ले, किसी ऐसे तथ्य को मान ले जो उसकी पूर्व धारणाओं के अनुरूप हो और उन्हें पूर्ण करने के लिए आवश्यक प्रतीत होता हो।'

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

न्यायालय की अंतरात्मा को वसीयत के प्रस्तोता द्वारा ऐसा साक्ष्य प्रस्तुत कर संतुष्ट किया जाना चाहिए, जिससे वसीयत से जुड़ी किसी भी संदेहास्पद अथवा अस्वाभाविक परिस्थिति का निवारण हो सके, बशर्ते कि वसीयत में वास्तव में कोई अस्वाभाविकता या संदेह हो। साक्ष्य का विधिक-सिद्धांत अनुमान अथवा संदेह को विधिक प्रमाण का स्थान देने की अनुमति नहीं देता और न ही ऐसे अनुमान या संदेह को उस तथ्य को ध्वस्त करने की अनुमति देता है, जो अन्यथा विधिक एवं विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा सिद्ध हो चुका हो। यद्यपि सुदृढ़ आधार वाला संदेह साक्ष्य की गहन समीक्षा का आधार बन सकता है, परंतु केवल संदेह मात्र किसी न्यायिक निर्णय—सकारात्मक या नकारात्मक—का आधार नहीं बन सकता।"

"9. यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि जो व्यक्ति वसीयत प्रस्तुत करता है, उसे यह स्थापित करना आवश्यक होता है कि वसीयतकर्ता वसीयत के निष्पादन के समय उसे बनाने में सक्षम था। प्रस्तोता द्वारा वसीयतकर्ता की क्षमता तथा विधि द्वारा परिकल्पित तरीके से वसीयत के निष्पादन को सिद्ध करने हेतु प्रथमदृष्टया

साक्ष्य प्रस्तुत करने पर उसका भार पूरा हो जाता है। वसीयत का विरोध करने वाला पक्ष ऐसे प्रथमदृष्टया मामले के प्रतिवाद में अभिलेख पर सामग्री प्रस्तुत कर सकता है, ऐसी स्थिति में प्रमाण का भार पुनः प्रस्तोता पर आ जाता है कि वह न्यायालय को सकारात्मक रूप से संतुष्ट करे कि वसीयतकर्ता को वसीयत की विषय-वस्तु का पूर्ण ज्ञान था और उसने उसे स्वस्थ एवं विवेकपूर्ण मानसिक अवस्था में निष्पादित किया था। इस संदर्भ में, जैसे कि वसीयत का स्वाभाविक होना, उसका पंजीकृत होना अथवा उसका ऐसे परिवेश एवं परिस्थितियों में निष्पादन होना, जिससे किसी भी प्रकार के संदेह की गुंजाइश न रहे—ऐसे तत्व महत्वपूर्ण हो जाते हैं। यदि लेन-देन में कुछ भी अस्वाभाविक न हो और प्रस्तुत साक्ष्य वसीयत के प्रमाण की आवश्यकताओं को संतुष्ट करता हो, तो न्यायालय केवल कुछ कल्पित संदेह या अनुमान के आधार पर 'प्रमाणित नहीं' का निष्कर्ष नहीं देगा। वसीयत को विवादित बताने वाले व्यक्ति के विरुद्ध वसीयत को प्रस्तुत एवं समर्थन करने वाले व्यक्ति कौन हैं, तथा पक्षकारों के अभिवचन, प्रासंगिक एवं महत्वपूर्ण होंगें।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

18. वादी ने अनुप्रमाणक साक्षी तुंगभद्र सिंह (अ.सा.-2) का परीक्षण किया। साक्षी तुंगभद्र सिंह (अ.सा.-2) ने अपने कथन की कंडिका-2 में यह कथन किया है कि वसीयतनामा उसके समक्ष निष्पादित एवं पंजीकृत किया गया था। वसीयत को पूर्व में दस्तावेज लेखक उपेन्द्रनाथ मिश्रा द्वारा स्वर्गीय समारू राम को पढ़कर सुनाया गया था। उसे उचित पाए जाने के पश्चात् स्वर्गीय समारू राम ने उसके समक्ष वसीयत पर हस्ताक्षर किए। इसके उपरांत उसने तथा जितेन्द्र कुमार मिश्रा ने वसीयतनामा पर साक्षी के रूप में अपने हस्ताक्षर किए। आगे उसने कंडिका-3 में यह भी कथन किया है कि वसीयत के निष्पादन के समय स्वर्गीय समारू राम पूर्णतः स्वस्थ एवं विवेकपूर्ण मानसिक अवस्था में थे तथा वसीयत उनके द्वारा अपनी स्वतंत्र इच्छा से तथा बिना किसी दबाव या प्रभाव के निष्पादित किया गया था। कंडिका-4 में उसने वसीयतकर्ता के हस्ताक्षर, अपने हस्ताक्षर तथा अन्य

अनुप्रमाणक साक्षी जितेन्द्र कुमार मिश्रा के हस्ताक्षरों को सिद्ध किया है। निर्विवाद रूप से, उसके कथन के अनुसार, स्वर्गीय समारू राम, जितेन्द्र कुमार मिश्रा तथा अ.सा.-2 तुंगभद्र सिंह—तीनों एक ही समय उपस्थित थे और सभी ने एक साथ वसीयतनामा पर हस्ताक्षर किए थे। मात्र इस आधार पर कि तकनीकी रूप से यह स्पष्ट शब्दों में नहीं कहा गया कि जितेन्द्र कुमार मिश्रा ने न केवल उसकी उपस्थिति में बल्कि वसीयतकर्ता स्वर्गीय समारू राम की उपस्थिति में भी वसीयत पर हस्ताक्षर किए थे, जब इस संबंध में उससे कोई प्रश्न ही नहीं पूछा गया, यह नहीं कहा जा सकता कि वसीयत का निष्पादन 1925 के अधिनियम की धारा 63(ग) के प्रावधानों में वर्णित सम्पूर्ण आवश्यकताओं को पूरा करने में कम है।

19. इसके अतिरिक्त, यद्यपि अपीलार्थीगण द्वारा अनुप्रमाणक साक्षी तुंगभद्र सिंह (अ.सा.-2) को यह सुझाव दिया गया कि उन्होंने तथा जितेन्द्र कुमार मिश्रा ने वसीयत के प्रस्तोता जयशंकर के साथ मिलीभगत कर एक झूठा वसीयत तैयार किया है, किंतु स्वयं अपीलार्थीगण ने जितेन्द्र कुमार मिश्रा को अपने साक्षी के रूप में डी.डब्ल्यू.-3 के रूप में परीक्षित किया, जिन्होंने स्वयं यह स्वीकार किया है कि उन्होंने दस्तावेज लेखक तथा तुंगभद्र सिंह (अ.सा.-2) की उपस्थिति में वसीयतनामा (प्रदर्श पी-1) पर अपने हस्ताक्षर किए थे। यद्यपि उन्होंने यह कथन किया है कि तुंगभद्र सिंह (अ.सा.-2) ने उनका परिचय स्वर्गीय समारू राम से कराया था, जैसा कि उनके कथन की प्रति-परीक्षा की कंडिका-2 से स्पष्ट है, परंतु उनका यह कथन, उनके कथन की कंडिका-1 में जहाँ उन्होंने यह स्वीकार किया है कि वे समारू मेहर को जानते थे, उनकी दो पत्नियाँ थीं तथा उनके तीन पुत्र—जयशंकर, दयाशंकर एवं चंद्रशेखर—थे, के दृष्टिकोण से सही नहीं है। आगे उन्होंने यह भी कथन किया है कि वे चंद्रशेखर को 2–3 वर्षों से जानते थे। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि वाद वर्ष 1996 में प्रस्तुत किया गया था, तुंगभद्र सिंह (अ.सा.-2) का कथन वर्ष 2003 में अभिलेखबद्ध किया गया तथा जितेन्द्र कुमार मिश्रा का कथन वर्ष 2004 में अभिलेखबद्ध किया गया। जितेन्द्र

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

कुमार मिश्रा ने यह कथन भी नहीं किया है कि उन्होंने रजिस्ट्रार के समक्ष अपने हस्ताक्षर नहीं किए थे अथवा स्वर्गीय समारू राम ने वसीयतनामा पर हस्ताक्षर नहीं किए थे या यह कि वसीयत कूटरचित है।

20. वसीयत एक पंजीकृत दस्तावेज है। चंद्रशेखर (डी.डब्ल्यू.-1) ने अपने कथन की कंडिका-24 में यह कथन किया है कि उसके पिता स्वर्गीय समारू राम की मृत्यु के पश्चात् ग्राम सहसपुर में स्थित भूमि का नामांतरण वसीयत के आधार पर वादी—जयशंकर—के नाम कर दिया गया था तथा यह तथ्य उसे स्वयं वादी द्वारा बताया गया था। कंडिका-23 में उसने यह भी कथन किया है कि उसने यह सुना था कि उसके पिता ने एक वसीयतनामा निष्पादित किया था, किंतु वह सही है या गलत, इसकी उसे जानकारी नहीं है और उसे यह भी ज्ञात नहीं है कि उसके पिता ने उक्त वसीयत उप-पंजीयक, सारंगढ़ के समक्ष पंजीकृत कराया था या नहीं। कंडिका-27 में उसने यह स्वीकार किया है कि उसके पिता किसी भी प्रकार की बीमारी से ग्रस्त नहीं थे। उसने कहीं भी इस तथ्य का खंडन नहीं किया है कि वसीयतनामा (प्रदर्श पी-1) पर स्वर्गीय समारू राम के हस्ताक्षर हैं। इसके विपरीत, उन्होंने (प्रतिवादीगण) ने एक अस्वीकार्य दस्तावेज (प्रदर्श डी-1) पर भरोसा जताने का प्रयास किया है, जिसे कथित रूप से जयशंकर द्वारा निष्पादित बंटवारा विलेख बताया गया है। उपर्युक्त दस्तावेज के मात्र अवलोकन से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि संपत्ति स्वर्गीय समारू राम द्वारा वादी—जयशंकर—के पक्ष में वसीयत की गई थी।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

21. उपरोक्त तथ्य की, जब माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **मधुकर डी. शेंडे** (पूर्वोक्त) के मामले में दिए गए निर्णय के प्रकाश में परीक्षा की जाती है, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि वादी ने वसीयत (प्रदर्श पी-1) का निष्पादन, उस तरीके से जैसा कि 1925 के अधिनियम की धारा 63(ग) और 1872 के अधिनियम की धारा 68 के अधीन प्रदत्त है, सिद्ध कर दिया है। इसके अतिरिक्त, वे परिस्थितियाँ, जिन्हें श्री पुस्ती के अनुसार वसीयत को अमान्य बनाने वाली बताया गया है, भी किसी भी दृष्टि से तर्कसंगत नहीं हैं। ऐसे कोई अभिवचन

प्रत्यर्थीगण ने अपने लिखित कथन में प्रस्तुत नहीं किए हैं। अपीलार्थीगण के अपने कथन के अनुसार, स्वर्गीय समारू राम बीमार नहीं थे। वादी द्वारा वसीयत को धोखाधड़ी के माध्यम से प्राप्त किए जाने का अभिवचन अपीलार्थीगण/प्रतिवादीगण द्वारा सिद्ध किया जाना था, जिसमें वे पूरी तरह विफल रहे हैं। यह जानते हुए भी कि वसीयत स्वर्गीय समारू राम द्वारा वादी के पक्ष में निष्पादित किया गया था, उन्होंने कभी यह आपत्ति नहीं उठाई कि वसीयत वास्तविक नहीं है इसके विपरीत, प्रदर्श डी-1 से स्पष्ट होता है कि उन्होंने अप्रत्यक्ष रूप से स्वर्गीय समारू राम द्वारा निष्पादित वसीयत के आधार पर वादी के अधिकार को स्वीकार किया है।

22. उपर्युक्त कारणों से, यह अपील, योग्यताहीन एवं सारहीन होने से ख़ारिज किये जाने योग्य है और यहाँ इसे ख़ारिज किया जाता है।

23. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

WebCopy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

24. तदनुसार एक आज्ञप्ति (डिक्री) तैयार की जाए।

सही/-

एन. के. अग्रवाल

न्यायाधीश

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated By Prashant Kumar